24.1 बजट घाटा एवं लोक ऋण

किसी अवधि में बजट घाटा (Budget deficit) राजस्व से व्यय का आधिक्य (excess of spending over revenues) है। किसी दिए हुए समय में ऋण (debt) पिछले सभी बजट घाटे का जोड़ (sum of all past budget deficits) है। इस प्रकार ऋण पिछले राजस्व से पिछले व्यय का संचयी आधिक्य (cumulative excess) है। ऋण एक स्टॉक चर (stock variable) है जिसकी माप समय के एक खास बिन्दु (at a point time) पर होता है। बजट घाटा एक प्रवाह चर (flow variable) है जिसकी माप समय की एक अवधि (during a period of time) में होती है। उदाहरणार्थ, मान लें कि 2005 के दौरान सरकार को 15,000 करोड़ रुपए का घाटा होता है, लोक ऋण के भण्डार में इस राशि को जोड़ दिया जाएगा। इसके विपरीत, मानलें कि 2003 में सरकार को 8,000 करोड़ रुपए का अतिरेक (surplus) प्राप्त हुआ। लोक ऋण के भण्डार में इतनी राशि की कमी हो गई।

सकल ऋण (Total Debt) तथा निवल ऋण (Net debt) में अन्तर किया जाता है। निवल ऋण को जनता द्वारा धारण किया गया ऋण (debt held by the public) भी कहा जाता है जिसमें स्वयं सरकार द्वारा धारण किए गए ऋण को शामिल नहीं किया जाता है। व्यक्ति या परिवार, बैंक, व्यवसायी, विदेशी तथा अन्य गैर-संघीय हस्तियां निवल ऋण के स्वामी होते हैं। सकल ऋण निवल ऋण तथा सरकार के स्वामित्व में बाण्ड का योग है। (Gross Debt = Net Debt + bonds owned by the government)

24.2 लोक ऋण के प्रति दृष्टिकोण (Attitude towards Public Debt)

किसी देश की सरकार को दो स्रोतों से आय प्राप्त होती है, यथा—लोक राजस्व तथा लोक ऋण। लोक राजस्व से तात्पर्य सरकार की उस प्राप्ति से है जिसके सम्बन्ध में सरकार का कोई नैतिक दायित्व नहीं है कि वह उसे उन लोगों को वापस कर दे जिनसे ली गयी थी। इसके विपरीत लोक ऋण के सम्बन्ध में सरकार का यह नैतिक दायित्व है कि वह मुद्रा उन लोगों को लौटा दे जिनसे ली गयी थी।

लोक ऋण एक ऐसा विषय है जो विस्मय, अज्ञानता तथा भय से घिरा है। इसके विषय में एक लेखक का कहना है कि "इतने अधिक के विषय में इतने लोगों ने कभी भी इतना कम नहीं समझा था।" ("Never have so many understood so little about so much.")। लोक ऋण के प्रति तीन दृष्टिकोण उल्लेखनीय हैं :

(क) क्लासिकल विचारधारा (Classical Approach);

(ख) केन्सीय विचारधारा (Keynesian Approach); तथा

(ग) केन्सोत्तर विचारधारा (Post-Keynesian Approach)।

24.2.1 क्लासिकल विचारधारा

इस विचारधारा के अन्तर्गत उन्नीसवीं सदी के अर्थशास्त्रियों तथा उनके नव-क्लासिकल उत्तराधिकारियों के दृष्टिकोण शामिल हैं।

Scanned with CamScanner

सामान्यतः क्लासिकल लेखक लोक ऋण के विरुद्ध थे। उनकी यह मान्यता थी कि व्यक्तिगत उपभोक्ता तथा व्यावसायिक फर्म साधनों का अधिक कुशल उपयोग करते हैं। पूर्ण रोजगार की स्थिति में सरकार जिन साधनों को उधार लेती है वे निजी क्षेत्र में अधिक उपयोगी कार्य में लगे रहते हैं। एडम स्मिथ ने ऐसा ही विचार व्यक्त किया था। इसका यह अर्थ नहीं है कि क्लासिकल अर्थशास्त्री किसी भी प्रकार के सरकारी ऋण के खिलाफ थे। वे न्यूनतम लोक व्यय का समर्थन करते थे। साथ ही, कर तथा ऋण के मध्य चयन करने में वे निम्न कारणों से कर के पक्ष में विचार व्यक्त करते थे :

(क) घाटे की वित्त व्यवस्था के कारण लोक ऋण में वृद्धि होती है। चूंकि ऋण लोक व्यय की आसान वित्त व्यवस्था है, अतः ऐसी सम्भावना है कि सरकार फिजूलखर्च करे तथा दायित्वहीन हो जाए। फलतः लोक ऋण अर्थव्यवस्था पर निश्चित रूप से भार बन जाएगा।

(ख) लोक ऋण पर ब्याज के भुगतान तथा मूलधन की वापसी के लिए अतिरिक्त कर लगाने की जरूरत होगी। ऐसा करारोपण कठिन हो सकता है क्योंकि सरकार की कर लगाने की क्षमता असीमित नहीं होती है।

(ग) घाटे की वित्त व्यवस्था के कारण मुद्रा की पूर्ति काफी बढ़ सकती है तथा मुद्रा-स्फीति का सृजन हो सकता है।

लेकिन उपर्युक्त के आधार पर यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि क्लासिकल अर्थशास्त्री सभी प्रकार के लोक ऋण के विरोधी थे। वे उत्पादक कार्यों के लिए ऋण लेने के पक्ष में थे। कारण यह है कि ऐसी पूंजी परियोजनाओं (Capital Projects) द्वारा उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं को बेचकर जो रकम प्राप्त की जाएगी उससे मूलधन तथा ब्याज का भुगतान किया जा सकता है। अतः अतिरिक्त कर लगाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। इन्हें स्वयं परिसमापन परियोजनाएं (Self-liquidating Projects) कहा जाता है।

24.2.2 केन्सीय विचारधारा

ऐसा कहना सही नहीं होगा कि सभी क्लासिकल लेखक लोक ऋण के खिलाफ थे। एडम स्मिथ की पुस्तक '*Wealth of Nations*' (1776) के प्रकाशन के नौ वर्ष पूर्व 1767 में जेम्स स्टुअर्ट (James Stuart) ने यह विचार व्यक्त किया कि लोक ऋण को अर्थव्यवस्था के साम्य चक्र (Balance Wheel) के रूप में कार्य करना चाहिए। अर्थव्यवस्था की स्थिति के अनुसार लोक ऋण का समायोजन किया जाना चाहिए। आर्थिक समृद्धि के काल में पूर्ण रोजगार के स्तर पर लोक ऋण का अर्थ होगा ब्याज दर में वृद्धि तथा वाणिज्य एवं व्यापार पर अनुचित प्रभाव। किन्तु, मन्दीकाल में जब व्यापार में ह्रास होता है, लोक ऋण द्वारा व्यय में वृद्धि करके आर्थिक क्रियाओं में वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार लोक ऋण सन्तुलन चक्र हो जाता है।

किन्तु, ऐसे छुट-पुट विचार क्लासिकल अर्थशास्त्रियों की प्रमुख विचारधारा के समुद्र में डूब गए। केन्स ने इस विचारधारा को पलट दिया। उसने यह स्वीकार नहीं किया कि हस्तक्षेप की अनुपस्थिति में स्वतन्त्र रूप से कार्य करने वाली पूंजीवादी अर्थव्यवस्था स्वयं ही पूर्ण रोजगार के साम्य पर पहुंच जाती है। उन्होंने बताया कि बड़े पैमाने पर अनैच्छिक बेरोजगारी के विद्यमान रहने पर भी अर्थव्यवस्था सन्तुलन में हो सकती है। यही केन्स की अर्ध रोजगार साम्य (Underemployment Equilibrium) की धारणा है। इस स्थिति में सरकार द्वारा यदि कोई कदम नहीं उठाया गया तो साधन काफी लम्बे समय तक निजी क्षेत्र में बेकार पड़े रह सकते हैं। अतः यदि लोक ऋण द्वारा सरकार अपने व्यय में वृद्धि करके बेकार पड़े मजदूरों तथा अन्य साधनों को रोजगार देती है, तो इस क्रिया से निजी क्षेत्र को साधनों से वंचित नहीं किया जाता है। इसके विपरीत, स्थिति यह होगी कि समग्र उत्पत्ति एवं आय में वृद्धि होगी। अतः यह कहना सही नहीं है कि लोक ऋण हमेशा अनुत्पादक, स्फीतिजनक तथा भार होता है।

कीन्स के अनेक अनुयायियों ने उपर्युक्त विश्लेषण को दूसरे छोर पर ले जाकर कहा कि आन्तरिक ऋण के आकार के विषय में कोई चिन्ता नहीं होनी चाहिए। आन्तरिक ऋण तो केवल हस्तान्तरण भुगतान (transfer payments) है तथा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण से रद्द (cancel) हो जाता है। अतः लोक ऋण की मात्रा के विषय में न सोचकर केवल उच्च स्तर पर रोजगार तथा आय के विषय में सोचना चाहिए। विचारों में इस परिवर्तन के साथ ही उभय बजट (double budget) की धारणा का विकास ... समझा जा सकता ... बजटों में से एक है राजस्व बजट (revenue budget) जिसमें चालू लाभ प्रदान करने ... परिचालन लोक व्यय (ordinary or operating public expenditure) को ... पूंजी बजट (capital budget) है जिसमें भावी लाभ प्रदान करने

—deficit spending without limit
—*Posner*

Scanned with CamScanner

है। सन्तुलित बजट की धारणा का उपयोग केवल राजस्व बजट के लिए किया जाता है, किन्तु वह भी हमेशा नहीं। कुछ लोगों ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि वार्षिक बजट सन्तुलन की धारणा के स्थान पर चक्रीय बजट (cyclical budget) सन्तुलन का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। लक्ष्य होना चाहिए सम्पूर्ण व्यापार चक्र के दौरान बजट में सन्तुलन। यदि अर्थव्यवस्था की प्रवृत्ति दीर्घकालीन मन्दी (secular stagnation) की ओर हो तो व्यापार चक्र के अच्छे वर्षों में भी बजट में अतिरेक (budget surplus) उचित नहीं होगा। इसका यह अर्थ है कि लोक ऋण में लगातार वृद्धि होती रहेगी।

केन्सीय धारणा का विकास एक अन्य ओर भी हुआ। पारम्परिक सरकारी बजट का स्थान राष्ट्रीय आर्थिक बजट ने ले लिया। सरकार की आय तथा व्यय तो राष्ट्रीय बजट का सिर्फ एक अंग है जबकि राष्ट्रीय बजट अर्थ-व्यवस्था के सभी अंगों या क्षेत्रों का विस्तृत योग है। पूर्ण रोजगार के स्तर पर सरकार को राष्ट्रीय बजट में सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए। इस बात का कोई महत्व नहीं कि इसके कारण सरकारी बजट में घाटा होता है या अतिरेक या सन्तुलन। अर्थ-व्यवस्था का क्रियाकलाप ही मार्ग-दर्शन का कार्य करेगा, न कि लोक ऋण की प्रवृत्ति।

लोक व्यय के क्षेत्र में कार्यात्मक वित्त (functional finance) की धारणा को लागू करते हुए लर्नर (Lerner) ने विचार व्यक्त किया कि सरकार को तभी ऋण लेना चाहिए जब वह यह चाहती हो कि मुद्रा के स्थान पर लोगों के पास बॉण्ड रहना चाहिए। इस क्रिया से बॉण्ड की कीमत घटेगी तथा ब्याज की दर बढ़ेगी। इसका प्रभाव यह होगा कि मुद्रा-स्फीति कम होगी। समग्र मांग में ह्रास तथा उत्पादक विनियोग के फण्ड की कमी होने की स्थिति में सरकार को चाहिए कि वह निजी क्षेत्र को ऋण दे या अपने व्यय में वृद्धि करे ताकि रोजगार एवं उत्पत्ति की गिरावट रुक सके। ऋण की अदायगी के लिए भी सरकार केन्द्रीय बैंक से ऋण ले सकती है। लर्नर के विचार में लोक ऋण के औचित्य की जांच समग्र मांग पर केवल इसके प्रभाव के आधार पर होनी चाहिए, लोक ऋण की मात्रा चिन्ता का विषय नहीं है। ऋण सेवा कोई समस्या नहीं है क्योंकि सरकार हमेशा ही केन्द्रीय बैंक से ऋण ले सकती है या मुद्रा छाप सकती है। कार्यात्मक वित्त के अन्तर्गत उपलब्ध उत्पत्ति तथा समग्र मांग के मध्य सही सन्तुलन कायम रखा जाता है। अतः मुद्रा-स्फीति का कोई भय नहीं रहेगा।

Scanned with CamScanner